शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जुलाई 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अग्निशेखर के साहित्य में विस्थापन की वेदना

डॉ. चेतना शर्मा
सहायक प्राध्यापक
देवी अहिल्या कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

विस्थापन मूलत: एक व्यक्ति या समूह द्वारा जोखिमों और लाभों को तोलने के बाद कम उपयुक्त वातावरण से अधिक लाभदायक स्थान की ओर गमन करने का परिमेय निर्णय है - रुबी एलसा जेकब
शब्द कोश के अनुसार "जो कहीं स्थापित था स्थित हो उसे वहाँ से हटाना या किसी स्थान पर बसे हुए लोगों को कहीं से बलपूर्वक हटाना और वह जगह उससे खाली करा लेना ही डिस्प्लेसमेंट या विस्थापन है।" उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि जब लोग अपनी बनी-बनाई दुनिया से उजड़ जाते हैं या उजाड़ दिये जाते हैं तो उसे ही हम विस्थापन कहते हैं। ये विस्थापन स्थायी या अस्थायी, स्वैच्छिक या बलात विस्थापन या फिर आन्तरिक या अन्तराष्ट्रीय विस्थापन प्रमुख रूप से देखे जा सकते हैं। प्रगति के साथ-साथ विस्थापन के मूल अर्थ में भी बदलाव आया है। अपनी इच्छा से भी लोग एक स्थान से विस्थापित होते हैं, साथ ही मजबूरीवश या बलपूर्वक भी लोग विस्थापित हो जाते हैं। जो लोग मजबूर होकर या बलपूर्वक अपनी जमीन से दूर होते हैं वे लोग मानसिक रूप से टूट जाते हैं। मानव संस्कृति का इतिहास और विस्थापन दोनों साथ-साथ चलने वाली धाराएं हैं। दुनिया का पहला विस्थापन कब हुआ यह बता पाना बड़ा कठिन काम है परन्तु रोजी रोटी की तलाश में घुमन्तु समुदाय का एक जगह से दूसरी जगह पर जाना युगों पुरानी घटना है परन्तु पिछले कई वर्षो से प्राकृतिक आपदाएं, आतंकवाद हमले, दुश्मन देश के हमले, शिक्षा की आवश्यकता रोजगार की तलाश, सामाजिक-धार्मिक मतभेद एव शहर या महानगरों में सरकारी एवं गैरसरकारी योजनाओं से लाखों लोग विस्थापन का अंग बनते हैं।

भारत में बहुचर्चित विस्थापन का कारण रहे भारत-पाक विभाजन से उत्पन्न विस्थापन, गिरमिटिया मजदूरों का विस्थापन, विकास योजनाओं से होने वाला विस्थापन, कश्मीरी पंडितों का विस्थापन। श्री अग्निशेखर न तो कश्मीर की सियासत में किसी परिचय के मोहताज हैं न हिन्दी साहित्य में। साहित्य में अग्निशेखर के नाम से मशहूर कुलदीप सुंबली कश्मीर के एक विस्थापित कवि के रूप में जाने जाते हैं।

अस्सी के दशक के पूर्वार्ध में जब अग्निशेखर कश्मीर विश्वविद्यालय में हिन्दी में पीएच.डी. कर रहे थे तो उन्होंने शायद सोचा ही न होगा कि नियति उन को नेतृत्व की इस दिशा में धकेल देगी। फिर अस्सी का दशक समाप्त होते-होते कश्मीर घाटी में इनकलाब-सा आ गया। वर्षों से कश्मीर में पाकिस्तान समर्पित अलगाववाद का जो लावा उबल रहा था वह ज्वालामुखी बन कर फूट पड़ा। कुछ दिनों के लिए कुछ शहरों में लग रहा था कि अलगाववादी अपने मकसद में कामयाब हो गए। मस्जिदों के लाउडस्पीकरों से, उर्दू अखबारों में छपी सूचनाओं से एक ही आवाज आ रही थी, रलिव या गलिव (हमारे साथ मिलो या

मरो।) ऐसे में कश्मीरी हिन्दू और अन्य भारतवादी आतंक के घेरे में आ गए। लाखों लोगों का एक पूरा समुदाय जो पीढ़ियों से कश्मीर के अतिरिक्त किसी घर को नही जानता था उसे पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया। इन्हीं लाखों विस्थापितों में अग्निशेखर के परिवार ने भी जम्मू में आकर डेरा डाला। वे चुप नहीं रहे। उन्होंने अपने अधिकार के लिए लड़ने का निश्चय किया। अपने साथियो के साथ मिलकर पनुन कश्मीर (अपना कश्मीर) के कन्वीनर के रूप में अवतरित हुए। पनुन कश्मीर का नारा था, 'असि छु तरुन कश्मीर' यानी हमें (वापस अपने) कश्मीर जाना है।

दुआएं मांग रही हैं माताएं
माताएं कर रही है इंतजार
सीमा पार गए बच्चों का
दुआएं मांग रही हैं माताएं।
उनके सही सलामत लौट आने का
डांट रही है भूखे बच्चों को
माताएं चीथडे तंबुओं में
डांट रही है भूखे बच्चों को
उन्हें लगाती है निचुड़ी छातियों से
सुबकती हैं बार-बार
विस्थापन में माताएं
माताएं देख रही
सीमा पर तैनात बेटों की राह
बह रहा है खून आर-पार
बिलख रही माताएं
घास की तरह कुचली जा रही है
दोनों के बीच।
कोई नहीं उठा रहा
माताओं के मानवाधिकारों का सवाल"

अग्निशेखर की वाणी दुःख-दर्द, संत्रास, घुटन, पीड़ा, आतंक आदि से ओतप्रोत है। वे लिखते हैं, "तूफान से पलायन कर तूफान की अभिव्यक्ति करने वाले अवश्य बहुत हैं किन्तु तूफान में रहकर उसे झेलकर भोगकर, उसके थमने की आशा करने वाले बहुत कम हैं।" अग्निशेखर भी उनमे से एक हैं।" इसमें कोई संदेह नही है कि विषम परिस्थितियों में काव्य रचना करना और वह भी साहित्य और यथार्थपरक चुनौतिपूर्ण है। परन्तु अग्निशेखर ने इन चुनीतियों को स्वीकारा सत्य और वास्तविकता को दर्शाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। वीभत्स एवं भयावह परिवेश में कवि ने निडर होकर भड़कते हुए शोलों को हवा देने की बजाय पानी देने का भरसक प्रयास किया। अग्निशेखर की कविताएं एक विस्थापित व्यक्ति के ऐसे उद्‌गार नहीं जो अपने घर से बिछुड़े हुए घर को बाहर खड़ा देख रहा है। साहित्यकार अपने आप को युद्ध और मौत के ऐन बीच पाता है। अग्निशेखर का साहित्य में विस्थापितों की वेदना के दुःस्वपनों और

उनकी स्मृतियों को व्यवस्था और जागरुक देशवासियों के सामने विस्थापन से जनित स्थितियों और उनके दुष्प्रभावों को बड़ी मार्मिकता के साथ अपने रचनाकर्म में बयान किया है। विस्थापन की पीड़ा को भोगते हुए सबसे बड़ी पीड़ा जो कभी उन्माद की हदें छूने लगती है। आतंकवाद से छूटे घर-संसार की पीड़ा है। घर मात्र जमीन का टुकड़ा या ईंट, सीमेंट का खांचा भर होता तो कभी भी कहीं पर भी बनाया जा सकता था। घर के साथ घर छूट जाने वाले की पहचान, स्मृतियों की भरी-पूरी ज़मीन और अस्मिता के प्रश्न जुड़े होते हैं। विस्थापितों से दरअसल, जमीन का टुकड़ा ही नही छूटा उनकी आस्था के केन्द्र वितस्ता, क्षीर-भवानी, डलझील भी छूट गये। कश्मीर में बर्फ के तूदों (ढेर) के बीच मनती शिवरात्रि और बसंत की मादक गंध में सांस लेता 'नवरोज नवरेह भी था।

पंडितों को वादी से खदेड़ने की साजिश में जिन छोटे-बड़े रहनुमाओं, साम्प्रदायिक तत्वों और पाक समर्पित जिहादी, आतंकवादियों के हाथ रहे हैं। वे आज बेखटके वादी की सामासिक संस्कृति के परखच्चे उड़ाने में लगे हुए हैं और कहते हैं पंडित तो सदा से भगोड़े रहे हैं।" अग्निशेखर को भगोड़ा शब्द कचोटता है वे लिखते हैं :

"आंखे फोड़ी, बाहें काटी, बेकसूर थे भागे पंडित
किसको चिंता, लावारिस है, भागे पंड़ित।"

आतंकवाद ने वादी के आकाश और धरती के रंग बदल दिए हैं। वहां जाकर तुम क्या पाओगे हमारी अपनी धरती अब हमारे लिए पराई हो गई। विस्थापितों के पास अतीत की स्मृतियां ही नहीं वर्तमान का दंश भी है। शिविरों मे पशुवत जीवन जीते संभ्रांत लोगों की दुर्दशा पर कवि उद्विग्न है। निजी पीड़ा की बात करते हुए भी उसकी संवेदाएं वैश्विक होकर इन बेघर बेजमीन लोगों के साथ जुड़ जाती है। जिनकी व्यथा उससे भिन्न नहीं है भले ही कारण भिन्न हो। वह चाहे गुजरात की त्रासदी हो, उडीसा या आन्ध्र का तूफान हो, तिब्बतियों-अफ्रीकियों या फिलिस्तीनियों की पीड़ा हो, संवेदना के तार एक-दूसरे से जोड़ते है।

अपनी रचनाओं पर निष्कासन की छाप का जिक्र करते हुए अग्निशेखर कहते हैं कि "दुर्भाग्य से निर्वासन हमारी नियति बन गई है। यह निर्वासन देश विभाजन के बाद की सबसे बड़ी मानवीय त्रासदी है।" इसने एक जीवन्त और उज्ज्वल संस्कृति को धूल खाने पर विवश किया और उसके रेशे-रेशे को बिखेर दिया है। नई चुनातियों, नए अनुभवों और नए वस्तुसत्य को सामने ला खड़ा किया है। यह वस्तुसत्य हमें यहूदियों के भी इतिहास से जोड़ता है। हमारे निर्वासन में लिखे गए साहित्य में कई चौंका देने वाली समानताएं होना स्वाभाविक है। साहित्य में विस्थापन के साथ फिलिस्तीनी साहित्य में दुर्दश आकांक्षा के साथ, अश्वेत साहित्य में आए नस्ल भेद के साथ अरबी साहित्य विशेषकर सीरिया में 1967 की अरब पराजय के बाद की मानसिकता के साथ मिला कर देखा जा सकता है। अग्निशेखर की ऐसी ही एक कविता 'कांगडी' है :

"जाड़ा आते ही वह उपेक्षिता पत्नी सी
याद आती है
अरसे के बाद हम घर के कबाड़ से
उसे मुस्कान के साथ निकाल लाते हैं

कांगड़ी उस समय
अपना शाप मोचन हुआ समझती है
उस की तीलियों से बुनी देह की झुर्रियों में
समय की पड़ी धूल
हम फूंक कर उड़ाते हैं"

अग्निशेखर का अपना लेखन संसार से एक अलग तरह का जुड़ाव है। उनके शब्दों में कविता रच रहा हूँ, तो जी रहा हूँ।' इसमें किसी भी प्रकार का कोई भी विरोधाभास नहीं है। अग्निशेखर की कविता का केन्द्रीय भाव संवेदन, निर्वासन, विस्थापन, निष्कासन है। यही उनके जीवन की संवेदना बन गई। इसी से मुक्ति की कामना और प्रतिरोध का संघर्ष कर रहे हैं। कवि इस कार्य में पूरी तरह से सक्रिय हैं और वे चाहते है कि जिनके साथ घाटी में जी रहे थे वे सभी सांस्कृति मूल्यों से परिपूर्ण हो उन लोगों में सद्भावना हो, धर्म जाति या मौलिक विचारधारा के आधार पर किसी के साथ भेदभाव न हो। कवि चाहता है कि पनुन कश्मीर मेरे लिए सेक्युलरिज्म की नर्सरी है जिसमें हम इन्हीं जीवन मूल्यों को बचा कर रख सके। कश्मीर घाटी में अलगाव और धर्म के आधार जब विखण्डन की प्रतिक्रिया अपने हिंसा और बर्बर रूप से चल रही थी तब कवि अग्निशेखर के पास दो ही रास्ते थे। या तो हार मान ले या फिर इस विखण्डन, बर्बरता का जबाब दे। कवि के जीवन में उस समय निविड़ एकान्त और उदास कर देने वाली चुप्पी थी। साथ ही भविष्य में आस्था रखने वाले विस्थापित संस्कृतिकर्मी, बुद्धिजीवी, संघर्ष, चेतना से सम्पन्न राजनीतिक कार्यकर्ता व शरणार्थी शिवरों में घुट-घुट कर सांस ले रही आम जनता की भागीदारी रही है जो आज के स्वार्थी युग में उन्हें अकेला होने पर भी संबल देती है।

अपनी जन्मभूमि कश्मीर से विस्थापित अग्निशेखर ने सांप्रदायिकता, अलगाववाद, धार्मिक कट्टरता और आतंकवाद के विरुद्ध होने वाले संघर्षो में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया है। इसी कारण इनके साहित्य में विस्थापन की वेदना दिखाई देती है। वेदना को साहित्य संवेदना से जोड़ते गए। जिसके कारण कवि के भाव पाठकों से स्वयं जुड़ते गए। अग्निशेखर में विस्थापन की पीड़ा और वर्तमान की भयावहता के विरुद्ध प्रतिशोध का स्वर मौजूद है 'पुल पर गाय' शीर्षक कविता में कवि ने विस्थापन के दर्द का साधारणीकरण किया। माँ की असाहयता और गाय के रंभाने की तुलना के साथ-साथ कवि ने आकाश में गहराते सुराख एवं खून की नदी का जो बिंब प्रस्तुत किया हैं वे सचमुच प्रभावशाली हैं।

"छींकती है जब भी मेरी माँ
यहाँ विस्थापन में
उसे याद कर रही होती गाय
इतने बरसों बाद भी
नहीं थमी है खून की नदी
उस पार खड़ी है गाय
इस पार है मेरी माँ "

कवि अपनी जड़ की और लौटने के लिए बेचैन है। कवि की जड़ यानी उसका गांव जहाँ आर नाभि-नालबद्ध है। अपनी जमीन को कभी विस्मृत नही होने देने का पिता को दिये गये वचन कवि पूरा करना

चाहता है। मनुष्य भौतिकवादिता, बाजारवादी अर्थव्यवस्था की चकाचौंध में अपनी धरोहर को भुला बैठता है पर अग्निशेखर की संबद्धता और प्रतिबद्धता हमे आश्वस्त करती है।

"मैं लड़ता रहूंगा पिता
स्मृतिलोप के खिलाफ।
और पहुंचूंगा एक दिन।
हजार हजार संघर्षो के बाद
अपने गाँव की नदी पर "

'याद करता बच्चा' शीर्षक कविता में अग्निशेखर की विस्थापन से उत्पन्न त्रासदी की अनुगूंज सुनाई पड़ती है। साथ ही कवि का लोक तथा उसकी लोक चेतना का स्वर साफतौर पर उभरता है। निर्वासित कश्मीरी पंडित अग्निशेखर की कविताओं में 19 जनवरी 1990 की वह आँच है जो बुझाए नही बुझती यह आग किसने लगाई ये मायने नही रखता। इससे अधिक ये मायने रखता है कि इस आग ने हमारे जमीर को कितना झुलसाया है और किन.किन अंगो को लहूलुहान किया है।

अग्निशेखर की कविता की अगली कड़ी जलावतनी और जीनोसाइड के दुष्प्रभावों पर आधारित है 'जलता पुल'।

कविता न तो शब्दों का मायाजाल होता है न ही बौद्धिक जुगाली। हमेशा कवि अपनी कविता के माध्यम से जीवन जीता है। वह अपनी भाषा, सभ्यता, संस्कृति लोक और मिट्टी से जुड़ी छोटी से छोटी चीज़ो को अपनी कविता में समेटता है और वह उसकी पहचान बन जाती है। कवि अग्निशेखर न केवल जलावतनी के लिए बल्कि कश्मीरी भाषा और अपनी संस्कृति के लिए भी जाने जाते हैं। कश्मीर को जीया और फिर अपनी ही मातृभूमि से जिस कदर उन्हें दरबदर किया वह आग मरते दम तक ठंडी नही होगी। यही कारण है कि उनकी कविताओं में यह दर्द गर्म लावा की तरह दहकता है। अग्निशेखर ने अपनी कविताओं में दो शब्दो की विस्तृत व्याख्या की जीनोसाइड और जलावतनी। यह वे शब्द है जो अग्नि शेखर की कविताओं को पुनर्भाषित करती है।

जीनो साइड का मतलब होता है किसी एक खास जीन का सफाया कर देना जैसे कि अल्पसंख्यक कश्मीरी पंडितों की पूरी वंशावली को जड़-मूल से खत्म कर देने का नाटक रचा गया और हमारी धर्म निरपेक्ष भारतमाता ने चुपचाप इस नग्नता को देखना स्वीकार किया। कश्मीरी बहू बेटियों को कश्मीर में ही छोड़ देने का और उन पुरुषों को नपुंसक बना कर रातों रात फरमान जारी कर दिए गए और हमारी भारत माता सोती रही.. दरअसल यह पूरी साजिश जीनोसाइड की थी जिसके अन्तगर्त इनकी पूरी जाति को नष्ट करना थी। दूसरा शब्द जलावतनी जिसका अर्थ है कि आपको अपने ही वतन से बेदखल कर देना इनके घरों, दुकानों और जमीनों में आग लगा दो ताकि वे फिर कभी इधर का रुख न करे। अग्निशेखर ने बताया कि कश्मीरी पंडितों को अपनी ही जमीन पर जाने के लिए वे सुरक्षा बलों के साथ या फिर पहचान छुपाकर एक पर्यटक के तौर पर जा सकते हैं लेकिन अपनी पहचान बता कर अपनी मिट्टी को छू नहीं सकते हैं। पेशे से डॉक्टर, वकील और अखरोट और सेब के बड़े-बड़े व्यापारी किस क्दर भूख से तड़पे होंगे, भूख से बिलबिलाना, दर-दर भटकना और अपनी समृद्ध संस्कृति को अपने जीवन मे जोड़े रखना ही अग्निशेखर के लिए कविता है । कश्मीर दूध की तरह सफेद बर्फ, अब भले ही काली हो

गई हो लेकिन अग्निशेखर की कविता में अभी भी जीवंत है। इस संग्रह की पहली कविता 'अस्थियों का युद्ध' जो पाठक को चौंकाती है। कवि के शब्द और बिंब उनकी आत्मा की तड़प है।

'यह मैंने बारुदी दिनों में
चोरी से अपनी मातृभूमि जाकर
एक दिन जाना
अस्थियां भी लड़ती हैं युद्ध"

इन काव्य पंक्तियों में कवि अपने ही पूर्वजों के अस्थियों के संग मुठभेड़ करता नजर आता है। इसमें उनकी कोई बदले की भावना नही है। उनकी सारी आकांक्षाएं स्मृतियों के रूप में विलोपित हो चुकी हैं।

'जलता हुआ पुल में कवि कहता
एक पुल के जलने से
जलती है कितनी शताब्दियां
वहाँ देखा एक कवि ने
सहमे घर हुए घर की एक खिड़की से'

घर की खिड़की के साथ.साथ वितस्ता नदी पर तैरती हुई वह नाव भी सहमी है जिसके पुल को जलाया जा रहा है। सहमा हुआ क्वि उन खिड़कियों से देख रहा है।

"सहमती हुई घाटियों को
पुल जल रहा था
अपने इतिहास के साथ
जिसके साथ चिढ थी उन्हें
जिसे बदलना चाह रहे थे वे"

अलगाववादियों ने न केवल इन्हें कश्मीर से खदेड़ा बल्कि उनकी पहचान, संस्कृतियो को बदल दिया। जगहों के नाम बदले गए। उनका पूरा इस्लामीकरण किया गया ताकि भूल से कोई भी हिन्दू यह न कह सके कि कभी ये उनका हिस्सा था। अग्निशेखर की कविताओं में यही दर्द है। उनकी भाषा में कही भी प्रतिशोध नही है वह सिर्फ मारती है मुर्दे दिल को झकझोरती है हृदयविहीन संवेदनाओं को।

"जघन्य है
जघन्य है
जघन्य है।
हत्यारों की घिनौनी राजनीति
और
खबरीली चैनलों पर
स्पर्धा बड़बोलेपन की"

सद्भाव-संवाद-समागम और सामंजस्य की रचना करने वाले अग्निशेखर ने अपनी कविता 'जलता हुआ पुल' में आईना दिखाया है जो पुल समागम, सामंजस्य, रागपूर्ण जीवन, लोक संस्कृति, जीवन समारोह और लीलामय क्रीड़ा भाव का समागम धर्मी संवाहक था यह पुल जो जल रहा था। उसके साथ अगणित

सब किंवदंतियां जल रही थी। क्या यह पुल कश्मीर और कश्मीरियों के बीच, उसके इतिहास और भूगोल के बीच, कश्मीर और शेष भारत के इतिहास-भूगोल-समाज-साहित्य भाषा-संस्कृति के बीच और हाँ स्वयं अग्निशेखर की कविता के बीच आज और अभी भी नही जल रहा है क्या ?

अग्निशेखर अपनी ऐतिहासिक परम्पराओं व संस्कृति को बचाए रखना बखूबी जानते हैं। उनकी यह छटपटाहट आने वाली पीढ़ी को लेकर है कि आने वाली पीढ़ी इसे जीवंत रखे। संस्कृति के जीर्णोद्धार की प्रक्रिया में वह अपना सबसे बड़ा हथियार अपनी कल्पना को मानते हैं। उनका मकसद बस यही है कि कुछ भी करके उन लोगों की घरवापसी हो ताकि ये संस्कृति विलुप्त न हो आने वाली पीढ़ी भी समृद्ध तहजीब के साक्षी रहे। (संकलित)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- हिंदीकुंज
- हिंदी विवेक पत्रिका ऑनलाइन
- दृष्टि आईएस नोट बुक
- यूनिवर्सिटी ऑफ़ कश्मीर
- https://www.amarujala.com
- समाचार विचार (कश्मीर)
- किसी भी समय (कविता संग्रह), अग्निशेखर
- मुझे छीन की गई मेरी नदी (कविता संग्रह), अग्निशेखर
- जवाहर टनल (कविता संग्रह), अग्निशेखर